व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्णा दत्त जी महाराज

सावित्री ऋचा, गायत्री मन्त्र

गोमेध याग के बहुत से भिन्न भिन्न प्रकार के पर्यायवाची हैं, देखो, ब्रह्मचारी विद्यालय में गोमेध याग कर रहा है, एक मानो देखोए किसी नदियों के तट पर विद्यमान हो करके एक योगेश्वर जब अपनी इन्द्रियों के ऊपर संयम करता है, और इन्द्रियों के विषयों को साकल्य बना रहा है और साकल्य बना करके अपने में एकोकीकरण कर रहा है, वह मानो देखो, वह भी गोमेध याग कर रहा है। हमारे यहाँ आयुर्वेद की औषधियों को पान करके ऋषि योगाभ्यास करते रहे हैं और यागी बनते रहे हैं क्योंकि जब तक प्राण का संचार अच्छे विशुद्ध रूप से नही हो पाता तब तक हमारा योगी बनना असम्भव हो जाता है। क्योंकि प्राण विशुद्ध रूपों से गति करना प्राण का अपने में संघर्ष न करना बहुत अनिवार्य है। हमारे आचार्यजन एक संकल्पोमयी प्राणायाम किया करते थे। पुरातन काल में ये प्रायः हम भी कराते रहे हैं। संकल्प से प्राणायाम होते हैं। जैसे हमने संकल्प किया है सूर्य और चन्द्रमा स्वरिञ्जनी होती है। जब संकल्प के द्वारा उनका आदान प्रदान होता है। तो संकल्पोमयी प्राणायाम मानव के बहुत से रूग्णों को और चंचलता को समाप्त कर देता है। मुझे बहुत पुरातन काल की एक वार्त्ता स्मरण है। एक समय मगध राष्ट्र में चले गए थे, बहुत पुरातन काल हुआ। मगध राष्ट्र में एक सरूचिकेत नामक ऋषि थे वह राष्ट्र मे बड़े प्रसिद्ध थे वह भयंकर वनों रहते थे। नद नदियों के तट पर रहते और ब्रह्मचारियों को कुछ शिक्षा भी देते रहते, एक ब्रह्मचारी उनके द्वारा ऐसा आ पंहुचा मनोबल चंचल बन गया, चंचल कैसे बना जिसे उन्माद के रूप में परिणत करते हैं। इसे उन्माद के रूपों में वर्णन करते रहते हैं। सरूची ऋषि ने उस ब्रह्मचारी को अपने आश्रम में आसन दिया। वह उसके ऊपर अन्वेषण कर रहे थे। अन्वेषण क्या था, उनके त्रि जो दोष हैं उन दोषों के ऊपर अन्वेषण और शोधन कर रहे थे

समुद्र जल की प्रतिक्रियाओं में जल में उन्हें लाना जल में तपाना और संकल्पोमयी प्राणायाम करने से मस्तिष्क की सूक्ष्मवाहक नाड़ी है। जो अग्नि में किसी कारण किसी आवेश से या किसी के आक्रमण से नाड़ी संकुचित हो जाती है, नाड़ियों में संकुचित पन आ जाता है। वह नाड़ियों का स्पष्टीकरण हो जाता है। स्पष्टीकरण होने से बुद्धि का विकास हो जाता है और बुद्धि का विकास होने से उसका रूग्ण समाप्त हो जाता है।

तुम्हें केवल यह परिचय देने आया हूँ कि यहाँ बहुत सी नाना प्रकार की औषधियां है, जिनको पान करने से मानव महान बन जाता है, पवित्र बन जाता है, सर्पगन्धा औषधि के आसन से यदि योगेश्वर ये चाहता है, कि मैं ध्यानावस्थित हो जाऊं, तो ध्यानावस्थित हो करके, वह परमात्मा से अपना मिलान करने लगता है हमारे यहाँ ऐसे ऐसे कुशा के आसनों पर विद्यमान हो करके नदियों के तटों पर विद्यमान हो करके, ऋषियों ने बहुत सा अनुसन्धान प्रभु को निहारते हुए प्रभु से वार्त्ता प्रगट करते रहते थे। हमारे यहाँ नाना रूपों में, कुशा मानी जाती है। कुशा के आसन पर सर्प नही आ पाता, और कोई प्राणी उस अव्रत नही कर पाता तो आसन पवित्र माना गया है। कुशा भी हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में बारह प्रकार की होती है। बारह प्रकार की कुशाओं को ले करके यदि उसको जल में तपाया जाता है। तपाने से उनका रस बनाया जाता है रस बना करके उसको जल की कृतिका बना करके जब खरल रह जाता है। उसको मधु वर्णिता में पान करने से वह सर्प जैसे विषैले प्राणियों को विजय करने वाला बन जाता है।

सावित्री ऋचा, गायत्री मन्त्र

अपां समीपे नियतो नैत्यिकं विधिमास्थितः। सावित्रीमप्यधीयीत गत्वाऽरण्यं समाहितः॥ मनु स्मृति २.१०४

पदार्थः (अरण्यं गत्वा) जंगल में अर्थात् एकान्त देश में जा (समाहितः) सावधान हो के (अपां समीपे नियतः) जल के समीप स्थित होके (सावित्रीम्+अपि+अधीयीत) सावित्री अर्थात गायत्री मन्त्र का उच्चारण अर्थ ज्ञान और उसके अनुसार अपने चाल चलन को करे।

ओ३म् उपह्वरे गिरीणां संगथे च नदीनाम् । धिया विप्रो अजायत ॥ ऋग्वेद ०८.००६.२८

इन्द्रः, विराडार्षीगायत्री, षड्जः।

पदार्थः (गिरीणाम्, उपह्वरे) पर्वतों के गहर प्रदेश में और (नदीनां, संगथे, च) नदियों के संगम में (विप्रः) वह विद्वान् परमात्मा (धिया) स्वज्ञानरूप से (अजायत) विद्यमान है॥

व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्णा दत्त जी महाराज

सावित्री जपन

गोमेध याग के बहुत से भिन्न भिन्न प्रकार के पर्यायवाची हैं, देखो, ब्रह्मचारी विद्यालय में गोमेध याग कर रहा है, एक मानो देखोए किसी नदियों के तट पर विद्यमान हो करके एक योगेश्वर जब अपनी इन्द्रियों के ऊपर संयम करता है, और इन्द्रियों के विषयों को साकल्य बना रहा है और साकल्य बना करके अपने में एकोकीकरण कर रहा है, वह मानो देखो, वह भी गोमेध याग कर रहा है।

हमारे यहाँ आयुर्वेद की औषधियों को पान करके ऋषि योगाभ्यास करते रहे हैं और यागी बनते रहे हैं क्योंकि जब तक प्राण का संचार अच्छे विशुद्ध रूप से नही हो पाता तब तक हमारा योगी बनना असम्भव हो जाता है। क्योंकि प्राण विशुद्ध रूपों से गति करना प्राण का अपने में संघर्ष न करना बहुत अनिवार्य है। हमारे आचार्यजन एक संकल्पोमयी प्राणायाम किया करते थे। पुरातन काल में ये प्रायः हम भी कराते रहे हैं। संकल्प से प्राणायाम होते हैं। जैसे हमने संकल्प किया है सूर्य और चन्द्रमा स्वरिञ्जनी होती है। जब संकल्प के द्वारा उनका आदान प्रदान होता है। तो संकल्पोमयी प्राणायाम मानव के बहुत से रूग्णों को और चंचलता को समाप्त कर देता है। मुझे बहुत पुरातन काल की एक वार्त्ता स्मरण है। एक समय मगध राष्ट्र में चले गए थे, बहुत पुरातन काल हुआ। मगध राष्ट्र में एक सरूचिकेत नामक ऋषि थे वह राष्ट्र मे बड़े प्रसिद्ध थे वह भयंकर वनों रहते थे। नद नदियों के तट पर रहते और ब्रह्मचारियों को कुछ शिक्षा भी देते रहते, एक ब्रह्मचारी उनके द्वारा ऐसा आ पंहुचा मनोबल चंचल बन गया, चंचल कैसे बना जिसे उन्माद के रूप में परिणत करते हैं। इसे उन्माद के रूपों में वर्णन करते रहते हैं। सरूची ऋषि ने उस ब्रह्मचारी को अपने आश्रम में आसन दिया। वह उसके ऊपर अन्वेषण कर रहे थे। अन्वेषण क्या था, उनके त्रि जो दोष हैं उन दोषों के ऊपर अन्वेषण और शोधन कर रहे थे

समुद्र जल की प्रतिक्रियाओं में जल में उन्हें लाना जल में तपाना और संकल्पोमयी प्राणायाम करने से मस्तिष्क की सूक्ष्मवाहक नाड़ी है। जो अग्नि में किसी कारण किसी आवेश से या किसी के आक्रमण से नाड़ी संकुचित हो जाती है, नाड़ियों में संकुचित पन आ जाता है। वह नाड़ियों का स्पष्टीकरण हो जाता है। स्पष्टीकरण होने से बुद्धि का विकास हो जाता है और बुद्धि का विकास होने से उसका रूग्ण समाप्त हो जाता है।

तुम्हें केवल यह परिचय देने आया हूँ कि यहाँ बहुत सी नाना प्रकार की औषधियां है, जिनको पान करने से मानव महान बन जाता है, पवित्र बन जाता है, सर्पगन्धा औषधि के आसन से यदि योगेश्वर ये चाहता है, कि मैं ध्यानावस्थित हो जाऊं, तो ध्यानावस्थित हो करके, वह परमात्मा से अपना मिलान करने लगता है हमारे यहाँ ऐसे ऐसे कुशा के आसनों पर विद्यमान हो करके नदियों के तटों पर विद्यमान हो करके, ऋषियों ने बहुत सा अनुसन्धान प्रभु को निहारते हुए प्रभु से वार्त्ता प्रगट करते रहते थे। हमारे यहाँ नाना रूपों में, कुशा मानी जाती है। कुशा के आसन पर सर्प नही आ पाता, और कोई प्राणी उस अव्रत नही कर पाता तो आसन पवित्र माना गया है। कुशा भी हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में बारह प्रकार की होती है। बारह प्रकार की कुशाओं को ले करके यदि उसको जल में तपाया जाता है। तपाने से उनका रस बनाया जाता है रस बना करके उसको जल की कृतिका बना करके जब खरल रह जाता है। उसको मधु वर्णिता में पान करने से वह सर्प जैसे विषैले प्राणियों को विजय करने वाला बन जाता है।

सावित्री जपन

अपां समीपे नियतो नैत्यिकं विधिमास्थितः। सावित्रीमप्यधीयीत गत्वाऽरण्यं समाहितः॥

मनु स्मृति २.१०४

(अरण्यं गत्वा) जंगल में अर्थात् एकान्त देश में जा (समाहितः) सावधान हो के

(अपां समीपे नियतः) जल के समीप स्थित होके (सावित्रीम्+अपि+अधीयीत) सावित्री अर्थात गायत्री मन्त्र का उच्चारण अर्थ ज्ञान और उसके अनुसार अपने चाल चलन को करे। महर्षि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास

व्याख्याः श्रृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज

ओ३म् प्रातरग्नि हवामहे मित्रा माराम् आस्वानि गाताः आभा मनु प्रा वसो इन्द्रश्चमाम् आ भाः३म्॥ १३.०३.१९६९

हे प्रातरग्नि! हे विधाता! हमारी रक्षा करो। आज हम अपनी रक्षा चाहते हैं यह जीवन आपका है। यह शरीर आपका है। मनुष्य सब ही कुछ परमात्मा के अर्पण कर देता है। उस समय मनुष्य का हृदय निर्मल और स्वच्छ हो जाता है आत्मा के द्वारा जो मल, विक्षेप आवरण पाप कर्मों द्वारा, दुष्ट कर्मों द्वारा आ जाते हैं वे उस प्रकाश से सब शान्त हो जाते हैं जैसे एक वस्त्र हैं और उसमें बड़े ही दोष हैं परन्तु जब वह जल के समीप जाता है तो जल उसे निर्मल और स्वच्छ बना देता है। इसी प्रकार हमें भी अपनी आत्मा के द्वारा जो मल विक्षेप आवरण हैं उनके शान्त करने के लिए हमें सबसे पूर्व माता सन्ध्या का पूजन करना है। उसके पाठ को करना है। जिससे हमारा वास्तविक कल्याण हो जाएगा। भगवन! मैं प्रातःकाल की बेला में आपके चरणों की वंदना कर रहा हूँ, वंदना का अभिप्राय है कि मैं अपने हृदय को उज्ज्वल बना रहा हूँ, आपकी शुद्ध, पवित्र अमृत संवेदना के साथ प्रभु! मैं अपने हृदय को निर्मल और स्वच्छ जल से स्वच्छ बनाना चाहता हूँ। आज सुन्दर समय में परमपिता परमात्मा ने हमें इन वेद मन्त्रों के उच्चारण करने का सुअवसर दिया। आज इस अमृतबेला में उस गान को गाएं, जिससे हम देवता बन जाएं देवता जन प्रातःकाल में कैसे अमृत को पान किया करते हैं हे प्रातःकाल की अग्नि! तू हवि है। तू हव्य पदार्थों को उत्पन्न करने वाली है। तू हमें हव्य पदार्थों को पान करा, जिससे हम देवता बन जाएं और देवता गणों के समाज में विराजमान होकर देव वाणियों को विचारें, जिससे हमारी विचारधाराएं हर स्थान में देववृत्ति ही बनी रहे। आज इस प्रातःकाल में प्रभु का गुणगान गाएं, हे परमात्मन्! तू कल्याण करने वाला है।

मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक दशा में मानव को वेदमन्त्रों का उद्गीत गाना चाहिए। जिससे हमारी वाणी पवित्र हो जाए, और वायुमण्डल में वह ध्वनि प्रविष्ट हो करके अशुद्ध परमाणुओं को निगलती चली जाए और उसका शुद्ध परमाणुओं से शुद्धिकरण हो जाए। मेरे प्यारे! परमात्मा का यह जगत भव्यता को प्राप्त हो जाए। आज कैसा सुहावना समय है कि जिस सुन्दर समय में परमपिता परमात्मा ने हमे इन वेदमन्त्रों के उच्चारण करने का सुअवसर दिया।

जिससे हमारा आत्मा बड़ा प्रसन्न होने जा रहा था, ऐसा प्रतीत होता चला जा रहा था कि आज हमें अमूल्य प्रकाश प्राप्त हो रहा है। इच्छा तो नहीं थी, कि वेदमन्त्रों के गान को त्याग करके आज हम देवस्वति सुब्रणी में आ जाएं। परन्तु मेरे प्यारे महानन्द जी! का यही कथन है, उनके अनुपम वाक् प्रारम्भ हैं, परन्तु वेदों का मनोहर गान इस प्रकार का था कि वाणी, हृदय, मुनिवरों! अन्तःकरण और इन्द्रिय सबका एक समागम हो रहा था, सब एक सूत्र में बंधते जा रहे थे। परिबद्ध होने जा रहे थे।

मेरे प्यारे! आज से लाखों वर्षों पूर्व मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे निर्णय कराया। यह वह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अमूल्य आदेश दिया करते थे। बारम्बार यज्ञ की धारा चलती थी अन्तरिक्ष में।

ओ३म् उदु स्तोमासो अश्विनोरबुध्रञ्जामि ब्रह्माण्युषसंश्च देवीः। आविवासन्रोदसी धिष्ण्येमे अच्छा विप्रो नासत्या विवक्ति॥ ऋग्वेद ७.७२.३

पदार्थः (अश्विनोः) अध्यापक तथा उपदेशक (अबुध्रन्) बोधन करते हैं कि (जामि) हे सम्बन्धिजनो ! तुम लोग (उषसः) उषःकाल में (ब्रह्माणि देवीः) वेद की दिव्यवाणी का (आविवासन्) अभ्यास करो (उत) और (इमे) इन (स्तोमासः) वेद के स्तोत्रों को (अच्छ) भली-भाँति (रोदसी) द्युलोक तथा पृथिवीलोक के मध्य (धिष्ण्ये) फैलाओ (च) और (विप्रः) मेधावी पुरुष (नासत्या विवक्ति) सत्यवादी विद्वानों को उपदेश

करें॥ (उषः) ब्रह्ममुहूर्त्त में (बोधि) उठकर (सुविताय) अपने सुख के लिए प्रार्थना करो।

व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्णा दत्त जी महाराज

नदियों के किनारे तपस्या

गोमेध याग के बहुत से भिन्न भिन्न प्रकार के पर्यायवाची हैं, देखो, ब्रह्मचारी विद्यालय में गोमेध याग कर रहा है, एक मानो देखोए किसी नदियों के तट पर विद्यमान हो करके एक योगेश्वर जब अपनी इन्द्रियों के ऊपर संयम करता है, और इन्द्रियों के विषयों को साकल्य बना रहा है और साकल्य बना करके अपने में एकोकीकरण कर रहा है, वह मानो देखो, वह भी गोमेध याग कर रहा है।

हमारे यहाँ आयुर्वेद की औषधियों को पान करके ऋषि योगाभ्यास करते रहे हैं और यागी बनते रहे हैं क्योंकि जब तक प्राण का संचार अच्छे विशुद्ध रूप से नही हो पाता तब तक हमारा योगी बनना असम्भव हो जाता है। क्योंकि प्राण विशुद्ध रूपों से गति करना प्राण का अपने में संघर्ष न करना बहुत अनिवार्य है। हमारे आचार्यजन एक संकल्पोमयी प्राणायाम किया करते थे। पुरातन काल में ये प्रायः हम भी कराते रहे हैं। संकल्प से प्राणायाम होते हैं। जैसे हमने संकल्प किया है सूर्य और चन्द्रमा स्वरिञ्जनी होती है। जब संकल्प के द्वारा उनका आदान प्रदान होता है। तो संकल्पोमयी प्राणायाम मानव के बहुत से रूग्णों को और चंचलता को समाप्त कर देता है। मुझे बहुत पुरातन काल की एक वार्त्ता स्मरण है। एक समय मगध राष्ट्र में चले गए थे, बहुत पुरातन काल हुआ। मगध राष्ट्र में एक सरूचिकेत नामक ऋषि थे वह राष्ट्र मे बड़े प्रसिद्ध थे वह भयंकर वनों रहते थे। नद नदियों के तट पर रहते और ब्रह्मचारियों को कुछ शिक्षा भी देते रहते, एक ब्रह्मचारी उनके द्वारा ऐसा आ पंहुचा मनोबल चंचल बन गया, चंचल कैसे बना जिसे उन्माद के रूप में परिणत करते हैं। इसे उन्माद के रूपों में वर्णन करते रहते हैं। सरूची ऋषि ने उस ब्रह्मचारी को अपने आश्रम में आसन दिया। वह उसके ऊपर अन्वेषण कर रहे थे। अन्वेषण क्या था, उनके त्रि जो दोष हैं उन दोषों के ऊपर अन्वेषण और शोधन कर रहे थे

समुद्र जल की प्रतिक्रियाओं में जल में उन्हें लाना जल में तपाना और संकल्पोमयी प्राणायाम करने से मस्तिष्क की सूक्ष्मवाहक नाड़ी है। जो अग्नि में किसी कारण किसी आवेश से या किसी के आक्रमण से नाड़ी संकुचित हो जाती है, नाड़ियों में संकुचित पन आ जाता है। वह नाड़ियों का स्पष्टीकरण हो जाता है। स्पष्टीकरण होने से बुद्धि का विकास हो जाता है और बुद्धि का विकास होने से उसका रूग्ण समाप्त हो जाता है।

तुम्हें केवल यह परिचय देने आया हूँ कि यहाँ बहुत सी नाना प्रकार की औषधियां है, जिनको पान करने से मानव महान बन जाता है, पवित्र बन जाता है, सर्पगन्धा औषधि के आसन से यदि योगेश्वर ये चाहता है, कि मैं ध्यानावस्थित हो जाऊं, तो ध्यानावस्थित हो करके, वह परमात्मा से अपना मिलान करने लगता है हमारे यहाँ ऐसे ऐसे कुशा के आसनों पर विद्यमान हो करके नदियों के तटों पर विद्यमान हो करके, ऋषियों ने बहुत सा अनुसन्धान प्रभु को निहारते हुए प्रभु से वार्त्ता प्रगट करते रहते थे। हमारे यहाँ नाना रूपों में, कुशा मानी जाती है। कुशा के आसन पर सर्प नही आ पाता, और कोई प्राणी उस अव्रत नही कर पाता तो आसन पवित्र माना गया है। कुशा भी हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में बारह प्रकार की होती है। बारह प्रकार की कुशाओं को ले करके यदि उसको जल में तपाया जाता है। तपाने से उनका रस बनाया जाता है रस बना करके उसको जल की कृतिका बना करके जब खरल रह जाता है। उसको मधु वर्णिता में पान करने से वह सर्प जैसे विषैले प्राणियों को विजय करने वाला बन जाता है।

व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज-महापुरुष ऊंचे ऊंचे भवनों में प्राप्त नही होते

मैं तुम्हें प्रारम्भ कर रहा था, राजन! कि महात्मा ज्ञानश्रुति की चर्चा कर रहा था, महात्मा ज्ञानश्रुति मानो देखो, वह भी जब राष्ट्रीय पद्धति में अप्रतम् देखो, राजा ज्ञानश्रुति हमारे यहाँ बड़े भव्य राजा थे और राजा के हृदय में मानो देखो, जब राष्ट्र

को त्याग करके, वह आत्मज्ञान के लिए, आत्मवान बनने के लिए तत्पर होते हैं, तो राष्ट्रीयता उसी काल में ऊँची बन जाती है।
मानो देखो, राजा ज्ञानश्रुति एक समय बेटा! देखो, अपने राष्ट्र में, मंत्रियों के मध्य में मानो देखो, विद्यमान थे और मध्य में विद्यमान हो करके महाराजा ज्ञानश्रुति ने अपने मंत्रियों से कहा हे मन्त्रीगणों! मेरी इच्छा यह है कि मैं किसी महापुरुष के द्वारा अपने को समर्पित करके, मैं आत्मवान बनना चाहता हूँ। क्योंकि आत्मवान बनना बहुत अनिवार्य है राजा जब त्याग करता है, राष्ट्र का, तो उस समय वह आत्मवान बनने के लिए और राष्ट्र को जेठे पुत्र को दे करके ही देखो, वह अपने को त्यागं ब्रह्मे वह भयंकर वनों में चला जाता है।
मानो देखो, महाराजा ज्ञानश्रुति के इन शब्दों को पान करते हुए, मन्त्रीगणों ने वहाँ से आज्ञा पा करके मुनिवरों! देखो, वह भ्रमण करते हुए, ब्रह्मवेत्ता के लिए सदैव तत्पर हो गये। उन्होंने यह कहा था, कोई भी ब्रह्मवेत्ता हो मानो उसके मुझे दर्शन करके, उसके चरणों की वंदना करनी है। मेरे प्यारे! देखो, सम्भव ब्रहे कृतम् मुनिवरों! देखो, मन्त्रीगण भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, राष्ट्र गृहों में पहुँचे, राष्ट्र गृहों में ब्रह्मवेत्ता को प्राप्त करने लगे, तो ब्रह्मवेत्ता नहीं प्राप्त हुआ। मेरे प्यारे! वह द्रव्यपतियों के गृहों में पहुँचे, वहाँ भी ब्रह्मवेत्ता नहीं थे, मेरे प्यारे! देखो, जब वह पुनः राजा के समीप आये, राजा से कहा प्रभु! हमें किसी ब्रह्मवेत्ता का दर्शन नहीं हुआ। तो उन्होंने कहा कहाँ गये? उन्होंने कहा, पृथ्वी तल पर, प्रत्येक राष्ट्रगृहों में, प्रत्येक द्रव्यपतियों के गृहों में, हम पहुँचे, हमें कहीं भी ब्रह्मवेत्ता प्राप्त नहीं हुआ।
महाराजा ज्ञानश्रुति बोले कि हे मंत्रियों! देखो, ब्रह्मवेत्ता तो कहीं भयंकर वनों में तुम्हें प्राप्त होगा। देखो, नदियों के तटों पर, जहाँ वे, परमपिता परमात्मा का दर्शन करते हैं आत्मवान बनने के लिए मानो जो सदैव तत्पर होते हैं वे भयंकर वनों में होते हैं। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ होते हैं जहाँ ऋषि का आसन पृथ्वी होता है और ओढ़न उसका अन्तरिक्ष होता है और मानो दिशाएं उसके पांसे बन करके मानो

देखो, उसकी कृतियों में रत्त होने वाले हो। तो मेरे प्यारे! देखो, मंत्रियों ने वहाँ से गमन किया, भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वार पर पहुँचे, तो महात्मा रेवक मुनि महाराज जिनको बेटा! एक सौ पांच वर्ष तक गाड़ी के नीचे व्यतीत किए हुए हो गएं थे। अपने प्रभु का चिन्तन करते हुए, आत्मवान बनते हुए, ब्रह्मवेत्ता कहाँ बेटा! मानो किस स्थली पर ब्रह्मवेत्ता रहते हैं, जहाँ भयंकर वनों में बेटा! जलाशय गमन कर रहा हो, और वह देखो, एक सौ पांच वर्ष तक बेटा! गाड़ी के नीचे तपस्या करते करते व्यतीत हो गया था।

तो मेरे प्यारे! देखो, राज्यं ब्रहो अस्सुतम मुनिवरों! देखो, जब मन्त्री उनके समीप पहुँचे, तो महाराजा गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा आईए, मन्त्री जी, पधारिए। मन्त्री बड़े आश्चर्य में हुए। मन्त्री ने कहा प्रभु! आप मुझे कैसे जान गए हैं? उन्होंने कहा कि मैं आपको इसलिए जानता हूँ कि आप महाराजा ज्ञानश्रुति जो मानो देखो, मनुवंश में जो जन्मत्तं राजा है मानो देखो, वह बड़े धर्मात्मा, महान और तपस्वी हैं आप वहाँ से विराजे हैं। ब्रह्मदं ब्रह्मे मेरे प्यारे! उन्होंने स्वीकार कर लिया। मन्त्री ने कहा प्रभु! यथार्थ है। वहाँ से वार्ता प्रगट करके, कुछ ब्रह्मवाद की, महामन्त्री ने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते बेटा! अयोध्या में पहुँचे। अयोध्या में आने के पश्चात महाराजा ज्ञानश्रुति से कहा प्रभु! एक ब्रह्मवेत्ता का दर्शन हुआ है। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम!

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा ज्ञानश्रुति अपने अस्त्रों शस्त्रों से और आभूषणों से मानो देखो, नाना द्रव्य ले करके, वह महापुरुष के, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वार पर पहुँचे, और गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा, आइये, राजं ब्रह्मे मुनिवरों! देखो, कैसे आए ब्रह्मणं ब्रह्मे? उन्होंने कहा प्रभु! मैं ब्रह्मविद्या को प्राप्त करने के लिए आया हूँ। उन्होंने कहा परन्तु तुम तो शुद्र हो। मेरे प्यारे! देखो, जब राजा ने यह विचारा, जब मुद्रा अर्पित करने लगे, तो उन्होंने राजा को जब शुद्र कहा तो ज्ञानश्रुति उन मुद्रा को ले करके, अपने गृह में पहुँचे।

गृह में विचारने लगे, अपनी पत्नी से बोले देवी! मैं आज देखो, ऋषि के द्वार पर पहुँचा। तो ऋषि को जब मैं द्रव्य समर्पित करने लगा, तो उन्होंने मुझे शुद्र कहा है। मुझे शुद्र की संज्ञा प्रदान की है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने विचारा कि द्रव्य सूक्ष्म है। तो मुनिवरों! देखो, बहुत सा द्रव्य ले करके, राजा ने गमन किया। ऋषि के द्वार पर ब्रह्मदं ब्रहे जब चरणों में समर्पित करने लगे, तो राजा से ऋषि ने कहा हे राजन! तुम शुद्र हो। गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने जब शुद्र कहा तो पुनः वह अपने राज्य अयोध्या में आ पहुँचे, अयोध्या में बोले कि हे देवी! मुझे तो ऋषि ने पुनः यह कहा है कि तुम शुद्र हो। उन्होंने कहा प्रभु! द्रव्य सूक्ष्म है। तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने एक रथ को सजातीय बना करके, रथ को मानो स्वर्ण के आभूषणों से, उसे सजातीय बना करके, उसमें द्रव्य ले करके बेटा! देखो, मणि इत्यादियों को लेकर के, उन्होंने, वहाँ से गमन किया।गमन करके, जब ऋषि को जा करके समर्पित करने लगे तो उन्होंने पुनः उन्हें शुद्र कहा।

मेरे प्यारे! देखो, वे पुनः अयोध्या में आए, तो राजा अब यह जानकर, चिंतत करने लगे कि ऐसा क्यों? उन्होंने मन्त्रीगणों की एक सभा उपस्थित की, और उन्होंने कहा ऋषि ने मुझे शुद्र कहा है। द्रव्य देने के पश्चात भी, रथ सजातीय देने के पश्चात भी, मुझे शुद्र कहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मणां ब्रह्मे मंत्रियों ने कहा प्रभु! कोई चिन्तन किया जाए इस सम्बन्ध में, तो एक वृद्ध सुकृत नाम के उनके महामन्त्री थे उनके पिता के समय के, उन्होंने कहा हे ज्ञानश्रुति! तुम्हें यह प्रतीत होना चाहिए कि तुम्हारे वंशलज में, इस मनुवंश में भी जितने भी राजा हुए हैं वह सर्वत्र ही इसी प्रकार के हुए हैं, जिन्होंने राष्ट्र त्याग करके केवल एक वस्त्र धारण करके, इन आत्मवेत्ताओं के समीप पहुँचे।

मेरे प्यारे! देखो, ज्ञानश्रुति के हृदय में यह वार्ता समाहित हो गई। उन्होंने बेटा! देखो, सब आभूषणों को त्याग करके और रथं ब्रह्मे व्रंतम् सब को त्याग करके बेटा! उन्होंने केवल एक वस्त्र धारण करके, और वह वन वृत्ति बन करके बेटा!

देखो, वनचर बन करके, उन्होंने अपने राष्ट्र से गमन किया और भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, जब ऋषि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वार पर पहुँचे तो गाड़ीवान ने द्रव्यं ब्रहे राजा से कहा हे राजन! धन्यं ब्रह्मा राजप्रव्हा व्रत्यं देवो ब्रह्मणो वर्णो वासुते वेद का आचार्य कहता है कि तुम ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए आए हो, तुम ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए तत्पर हो जाओ। आओ, विराजो।

महाराजा ज्ञानश्रुति तथा नाना ऋषिवर उनके यहाँ अनुसन्धान करते रहे। मैं उसी ज्ञानश्रुति की चर्चा करने चला हूँ। जिस समय ज्ञानश्रुति ने नाना प्रकार की मुद्राओं को त्याग कर के अपना स्वरूप बनाया तो वह गाड़ीवान रेवक मुनि के द्वार पर पहुँचे। गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने उनके स्वागतार्थ ब्रह्मज्ञान की चर्चाएँ की। इस ब्रह्मवान की चर्चाएँ इससे पूर्व काल में भी उन्हाँने कीं। आज भी मुझे स्मरण आ रहा है गाड़ीवान रेवक से महाराजा ज्ञानश्रुति ने कहा प्रभु! मैं ब्रह्मज्ञान चाहता हूँ। अपना राष्ट्र मैंने अपने ज्येष्ठ पुत्र को प्रदान कर दिया है। मैं ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहना चाहता हूँ। देखा जब हम यह विचारते हैं कि जैसे ब्रह्म का आयतन यह विज्ञानमीय स्वरूप वाला जगत, विज्ञानमयी स्वरूप वाला वह ब्रह्म हमें दृष्टिपात आता है। तो यह जो शरीर है, यह जो प्राण पञ्च महाभौतिक तत्त्वों में रत्त रहने वाला है यह आत्मा का आयतन है। आत्मा का यह गृह माना गया है। जैसे एक एक परमाणु ब्रह्म का आयतन माना गया है। वह मानव शरीर में आत्मा भी ब्रह्म का आयतन माना गया है इसलिए वह वास कर रहा है। तो जब यह विवेचना आने लगी तो गाड़ीवान रेवक मुनि माहराज ने यह विवेचना प्रारम्भ की।

महाराजा ज्ञानश्रुति ने कहा प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ, जब में नाना मुद्राएँ ले करके आपके समीप आया तो आपने मुझे यह कहा। परन्तु संसार में नाना प्रकार की माया और मुद्राओं के बिना राष्ट्र का क्रियाकलाप नहीं चलता, क्रियाशील नहीं हो पाता। याग इत्यादिओं का जो कर्म वह भी मुद्रा के बिना नहीं हो पाता। तो उससे अनभिज्ञ होने को आपने मुझे कहा। गाड़ीवान रेवक ने कहा, कहो राजन!

आपके हृदय में जब यह विचार आया कि मैं ब्रह्मवेत्ता बनना चहता हूँ। हे राजन! जब तुम्हारी यह जिज्ञासा थी तो द्रव्य का कोई समन्वय नहीं रह पाता। जब उन्हौंने यह कहा तो महाराजा ज्ञानश्रुति ने कहा, प्रभु! ज्ञान और माया का प्रायः समन्वय रहता है। मानव का जो शरीर है यह पञ्च महाभौतिक है यह माया के गुणाध्यान कहलाया गया है इसी प्रकार यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड और राष्ट्र में एक ही क्रियाकलाप हो रहा है। महाराजा ज्ञानश्रुति के वाक्य को पान करके गाड़ीवान रेवक ने कहा, हे राजन! जब तुम मेरे समीप मुद्रा ले करके आए तो ब्रह्म में मुद्रा का कोई समन्वय नहीं होता। रहा विचार यह कि तुम्हारा पथ यह कहता है कि माया कृतियों में भी निष्पन्न हो करके मानव निर्बन्धन हो करके इसमें रमण कर सकता है और तुमने ऐसा वर्णन कराया कि यही जानना चाहते हो। परन्तु मैंने इसलिए शुद्र कहा कि तुम ब्रह्मवेत्ता को अपनाना चाहते थे, स्थापित करना चाहते थे और उस ब्रह्मवेत्ता की इच्छा नहीं है, जब इसकी इच्छा नहीं है तो देने वाला भी क्षुद्र के तुल्य है और यही लक्ष्मी तो चञ्चल है ही जो मानव को कहीं का कहीं ले जाती है। उन्होंने यह कहा तो गाड़ीवान रेवक मुनि के वाक्यों को पान करके ज्ञानश्रुति मौन होने लगे और उन्होंने कहा, हे राजन! तुम रथ को सजातीय बना करके तुम रथ को ले करके यहाँ आए तो तुम्हारा मन नाना कृतियों में रत्त रहने वाला नहीं था। महाराजा ज्ञानश्रुति मौन हो गए।

तो विचार क्या मुनिवरों! जब ब्रह्मवेत्ता के समीप पहुँची तो तीन समिधा ले करके जाना चाहिए। समिधा का अभिप्राय क्या? मैंने बहुत परातन काल में कहा, तीन समिधा वह होती हैं जो आत्मा को चेताने के लिए अग्नि में उद्बुद्ध की जाती हैं।

ओ३म् उ॒प॒ह्व॒रे गि॑री॒णां स॑ङ्ग॒थे च॑ न॒दीना॑म्। धि॒या विप्रो॑ अजायत ॥ ऋग्वेद ०८.००६.२८

इन्द्रः, विराडार्षीगायत्री, षड्जः।

पदार्थः (गिरीणाम्, उपह्वरे) पर्वतों के गह्र प्रदेश में और (नदीनां, संगथे, च) नदियों के संगम में (विप्रः) वह विद्वान् परमात्मा (धिया) स्वज्ञानरूप से (अजायत) विद्यमान है॥

वेदमन्त्र गानम्

व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज

वेदमन्त्र का गान गाओ

मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक दशा में मानव को वेदमन्त्रों का उद्गीत गाना चाहिए। जिससे तुम्हारी वाणी पवित्र हो जाए और वायुमण्डल में वह ध्वनि प्रविष्ट हो करके अशुद्ध परमाणुओं को निगलती चली जाए, और उसका शुद्ध परमाणुओं से शुद्धिकरण हो जाए। मेरे प्यारे परमपिता परमात्मा का यह जगत भव्यता को प्राप्त हो जाए। आज कैसा सुहावना समय है जिस सुन्दर समय में परमपिता परमात्मा ने हमे वेदमन्त्रों के उच्चारण करने का सुअवसर प्रदान किया है।-पूज्यपाद गुरुदेव

है। ऋग और साम उसी को कहा जाता है जहाँ एक दूसरे का मिलान होता हो। हमारे यहाँ जैसे पृथ्वी को ऋग कहा जाता है और वायु को साम कहा है दोनों के मिलान से ही सामगान होता है। इसी प्रकार जैसे मानव का तालु होता है और जीभ होती है दोनों के मिलान से ही मानव के मुखारबिन्द से शब्द की रचना होती है इसी प्रकार वहाँ भी ऋग और साम दोनों का मिलान हो करके वहाँ वायु और जल दोनों का ऋग और साम माना है। जैसे हमारे इस पृथ्वी मण्डल पर पृथ्वी और वायु को ऋग और साम माना है वहाँ पूरे चन्द्र मण्डल में वायु को और जल को दोनों ऋग और साम को उपाधि प्रदान की जाती है। उस काल में वहाँ गान गाया जाता है। गान उसे कहते हैं जहाँ दोनों का मिलान होता है, वहाँ शब्द की रचना होती है, वहीं मिलान होता है, वहीं नाना प्रकार की उत्पत्ति का कारण बना करता है।

जब चाक्राणी गार्गी अपने शरीर को त्यागने लगी तो उस समय मुनिवरों! देखो, वह सामगान गा रही थी और जब वे सामगान गा रही थी तब नाना, ऋष मुनि विद्यमान हैं। उनके मध्य में चाक्राणी गार्गी विद्यमान हो करके कहती हैं, हे ऋषियो!

अब मैं अपने गृह में प्रवेश कर रही हूँ। मैं इस संसार के गृह को त्याग रही हूँ। इस क्षेत्र में आ करके मैंने मृत्यु को विजय किया है। ऐसे ही ऋषियो! तुम भी मृत्यु से विजय करने का प्रयास करो।

साम गान वेत्ताओं ने सामगान को लिया और गान गाने लगे। जब गान गाने लगे, गान गाता रहा, उद्गार चलते रहे, जब मुनिवरों! प्राण की गति को जानने लगे, जब प्राण उद्गार बन गये, उन प्राणों का अभ्यास करते करते चार चार घड़ी का अभ्यास किया। उस अभ्यास के करने से मेरे प्यारे! वाणी अग्नि का स्वरूप बन गई जैसे जब अग्नि का स्वरूप बन गई जैसे मुनिवरों! बाह्य जगत में समिधा को समिधा के घर्षण से अग्नि उत्पन होने लगी। इसी प्रकार मेरे पुत्रो! देखो, मुझे स्मरण है यह वाणी ही मानो शब्द के घर्षण से अग्नि उत्पन्न होने लगी। जब यह उत्पन्न होने लगी तो मुनिवरों! यह विचारा कि यह तो विशाल अग्नि है। अग्नि को जानने का प्रयास किया और इस अग्नि को कहा दीपावली बनने लगी।

पूज्य महानन्द जीःआज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वाक प्रकट कर रहा हूँ कि जहाँ हमारी ये आकाशवाणी जा रही है, वहाँ सामगान का पारायण हुआ, उसकी पूर्ण अस्वाति अध्धे समाप्त हुआ।

ओ३म् एतो॒ न्विन्द्रं॒ स्तवा॑म शु॒द्धं शु॒द्धेन॒ साम्ना॑। शु॒द्धैरु॒क्थैर्वा॑वृ॒ध्वांसं॑ शु॒द्ध आ॒शीर्वा॑न्ममत्तु ॥ ऋग्वेद ८.९५.७

पदार्थः हे साथियो ! (एत उ) आओ, (नु) शीघ्र ही, तुम और हम मिलकर (शुद्धम् इन्द्रम्) पवित्र जगदीश्वर की (शुद्धेन साम्ना) पवित्र सामगान से (स्तवाम) स्तुति करें। (शुद्धैः) पवित्र (उक्थैः) स्तोत्रों से (वावृध्वांसम्) वृद्धि को प्राप्त हममें से प्रत्येक जन को (आशीर्वान्) आशीषों का अधिपति जगदीश्वर (शुद्धैः) पवित्र आशीर्वादों से (ममत्तु) आनन्दित करे॥

सामवेद में सर्वाधिक 'गायत्री' व 'प्रगाध’ छन्दों का प्रयोग हुआ है। सामवेद के

अधिकांश मन्त्र दो छन्दो में हैं गायत्री तथा प्रगाथ (गायत्री और जगती का सम्मिश्रण)। निर्विवाद ये गीत और मन्त्र इन छन्दों में गायन की दृष्टि से ही लिखे थे। गायत्री तथा प्रगाथ दोनो शब्द गा (गै) धातु से बने हैं, जिसका अर्थ है गाना। 'सामन्' शब्द की व्युत्पत्ति प्राप्ति अर्थक 'सन्' धातु से 'मन् प्रत्यय लगाने पर होती है। साम का शाब्दिक अर्थ है वह गीत जिसके द्वारा परमात्मा को पाया जाता है। शबरस्वामी के अनुसार 'विशिष्ट काचित् साम्यो गीतिः सामेत्युच्यते'। अर्थात् मन्त्रों को जब विशिष्ट गान पद्धति से गाया जाता है, तब उसे 'सामन्' कहते हैं। सामवेद का 'ऋत्विक उद्गाता है।

वेदमन्त्र गानम्

व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज

साम गान गाओ

मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक दशा में मानव को वेदमन्त्रों का उद्गीत गाना चाहिए। जिससे तुम्हारी वाणी पवित्र हो जाए और वायुमण्डल में वह ध्वनि प्रविष्ट हो करके अशुद्ध परमाणुओं को निगलती चली जाए, और उसका शुद्ध परमाणुओं से शुद्धिकरण हो जाए। मेरे प्यारे परमपिता परमात्मा का यह जगत भव्यता को प्राप्त हो जाए। आज कैसा सुहावना समय है जिस सुन्दर समय में परमपिता परमात्मा ने हमे वेदमन्त्रों के उच्चारण करने का सुअवसर प्रदान किया है।-पूज्यपाद गुरुदेव

है। ऋग और साम उसी को कहा जाता है जहाँ एक दूसरे का मिलान होता हो। हमारे यहाँ जैसे पृथ्वी को ऋग कहा जाता है और वायु को साम कहा है दोनों के मिलान से ही सामगान होता है। इसी प्रकार जैसे मानव का तालु होता है और जीभ होती है दोनों के मिलान से ही मानव के मुखारबिन्द से शब्द की रचना होती है इसी प्रकार वहाँ भी ऋग और साम दोनों का मिलान हो करके वहाँ वायु और जल दोनों का ऋग और साम माना है। जैसे हमारे इस पृथ्वी मण्डल पर पृथ्वी और वायु को ऋग और साम माना है वहाँ पूरे चन्द्र मण्डल में वायु को और जल को दोनों ऋग और साम को उपाधि प्रदान की जाती है। उस काल में वहाँ गान गाया जाता है। गान उसे कहते हैं जहाँ दोनों का मिलान होता है, वहाँ शब्द की रचना होती है, वहीं मिलान होता है, वहीं नाना प्रकार की उत्पत्ति का कारण बना करता है।

जब चाक्राणी गार्गी अपने शरीर को त्यागने लगी तो उस समय मुनिवरों! देखो, वह सामगान गा रही थी और जब वे सामगान गा रही थी तब नाना, ऋष मुनि विद्यमान हैं। उनके मध्य में चाक्राणी गार्गी विद्यमान हो करके कहती हैं, हे ऋषियो!

अब मैं अपने गृह में प्रवेश कर रही हूँ। मैं इस संसार के गृह को त्याग रही हूँ। इस क्षेत्र में आ करके मैंने मृत्यु को विजय किया है। ऐसे ही ऋषियो! तुम भी मृत्यु से विजय करने का प्रयास करो।

साम गान वेत्ताओं ने सामगान को लिया और गान गाने लगे। जब गान गाने लगे, गान गाता रहा, उद्गार चलते रहे, जब मुनिवरों! प्राण की गति को जानने लगे, जब प्राण उद्गार बन गये, उन प्राणों का अभ्यास करते करते चार चार घड़ी का अभ्यास किया। उस अभ्यास के करने से मेरे प्यारे! वाणी अग्नि का स्वरूप बन गई जैसे जब अग्नि का स्वरूप बन गई जैसे मुनिवरों! बाह्य जगत में समिधा को समिधा के घर्षण से अग्नि उत्पन होने लगी। इसी प्रकार मेरे पुत्रो! देखो, मुझे स्मरण है यह वाणी ही मानो शब्द के घर्षण से अग्नि उत्पन्न होने लगी। जब यह उत्पन्न होने लगी तो मुनिवरों! यह विचारा कि यह तो विशाल अग्नि है। अग्नि को जानने का प्रयास किया और इस अग्नि को कहा दीपावली बनने लगी।

पूज्य महानन्द जीःआज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वाक प्रकट कर रहा हूँ कि जहाँ हमारी ये आकाशवाणी जा रही है, वहाँ सामगान का पारायण हुआ, उसकी पूर्ण अस्वाति अध्छे समाप्त हुआ।

ओ३म् इन्द्रा॑य॒ साम॑ गायत॒ विप्रा॑य बृ॒हते बृ॒हत्। ध॒र्म॒कृते॑ विप॒श्चिते॑ पन॒स्यवे॑ ॥ ऋग्वेद ८.९८.१

पदार्थः हे मित्रो! तुम (विप्राय) विशेषरूप से क्षतिपूर्ति करनेवाले अथवा ब्राह्मण के समान श्रेष्ठ ज्ञान का उपदेश करनेवाले, (बृहते) महान् (ब्रह्मकृते) वेदकाव्य के रचयिता, (विपश्चिते) सकल विद्याओं में पारंगत, (पनस्यवे) दूसरों की प्रशंसा और कीर्ति चाहने वाले (इन्द्राय) राजराजेश्वर परब्रह्म परमेश्वर के लिए (बृहत्) बहुत अधिक (साम गायत) सामगान करो ॥

सामवेद में सर्वाधिक 'गायत्री' व 'प्रगाध' छन्दों का प्रयोग हुआ है। सामवेद के

अधिकांश मन्त्र दो छन्दो में हैं गायत्री तथा प्रगाथ (गायत्री और जगती का सम्मिश्रण)। निर्विवाद ये गीत और मन्त्र इन छन्दों में गायन की दृष्टि से ही लिखे थे। गायत्री तथा प्रगाथ दोनो शब्द गा (गै) धातु से बने हैं, जिसका अर्थ है गाना। 'सामन्' शब्द की व्युत्पत्ति प्राप्ति अर्थक 'सन्' धातु से 'मन् प्रत्यय लगाने पर होती है। साम का शाब्दिक अर्थ है वह गीत जिसके द्वारा परमात्मा को पाया जाता है। शबरस्वामी के अनुसार 'विशिष्ट काचित् साम्यो गीतिः सामेत्युच्यते'। अर्थात् मन्त्रों को जब विशिष्ट गान पद्धति से गाया जाता है, तब उसे 'सामन्' कहते हैं। सामवेद का 'ऋत्विक उद्गाता है।

वेदमन्त्र गानम्

व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज

कल्याणमयी वेदवाणी

बेटा! वेद मन्त्रों की जो प्रतिभा है, वह मानव को कहीं का कहीं मानो देखो, वर्णित कर रही है। उसी वर्णन शैली में, जब हम प्रवेश करते है तो अन्तर्हृदय गद् गद् हो जाता है।

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भान्ति कुछ वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा। आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं, और वे सर्वज्ञ जगत के नियन्ता अथवा निर्माण करने वाले हैं, और जितना भी ये जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमे दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। प्रत्येक मानव का ये कर्तव्य है, क्या उस परमात्मा की अनुपम सृष्टि को निहारना चाहिए, और उसको अन्तर्हृदय में जो मानव धारयामि बना लेता है, अथवा धारण कर लेता है, तो उस मानव का हृदय विशाल और पवित्रता को प्राप्त हो जाता है। तो परमात्मा की सृष्टि को दृष्टिपात करना अथवा उसे निहारना और हृदय स्थलि में सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान को उसमें धारण करना उसमे समावेश करना ये प्रत्येक मानव का कर्तव्य कहलाता है। जिससे मानव के अन्तर्हृदय में एक पवित्रता का समूह उपलब्ध हो जाए। और जिस समूह के द्वारा हमारा जीवन महान बनता है। उस साम्यता को प्रायः हम दृष्टिपात करते रहें। तो आज का हमारा वेदमन्त्र ये उदगीत गा रहा है, क्या इस संसार में मानव जब याग के क्षेत्र में प्रवेश करता है, तो भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन करने लगता है, आज कहीं से मुझे ये प्रेरणा आ रही है, कि सविता के सम्बन्ध में कुछ विचार विनिमय दिया जाए।

ओ३म् यस्ते॑ अग्ने सुम॒तिं मर्तो॒ अक्ष॒त्सह॑सः सूनो॒ अति॒ स प्र शृ॑ण्वे । इषं॒ दधा॑नो॒ वह॑मानो॒ अश्वै॒रा स द्यु॒माँ अम॑वान्भूषति॒ द्यून् ॥ ऋग्वेद १०.११.७

पदार्थः (सहसः सूनो अग्ने) हे ओज-अध्यात्म-तेज के उत्पादक परमात्मन्! (ते) तेरी (सुमतिम्) कल्याणी वेदवाणी को (यः मर्तः अक्षत्) जो मनुष्य अपने अन्दर समा लेता है (सः अति प्रशृण्वे) वह अत्यन्त अध्यात्मगुणसम्पन्न हो जाता है, और (इषं दधानः) कमनीय भोगों को धारण करता हुआ-प्राप्त करता हुआ (सः अश्वैः वहमानः) वह व्याप्तिशील सूर्य किरणों द्वारा, प्रशस्त इन्द्रियों द्वारा वहन किया जाता हुआ आस्तिक मनवाला, विद्युदादि यानों द्वारा वहन किया जाता हुआ राजा (द्युमान्-अमवान्-आ द्यून् भूषति) तेजस्वी आत्मवान् होता हुआ अपने को भूषित करता है।

व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज

कल्याणमयी वेदवाणी

हे वेदवाणी! तू कल्याण करने वाली है। तू वह वेदवाणी है जो सृष्टि के प्रारम्भ से संसार के कल्याणार्थ आयी है। हे वाणी! तेरा जो अनुकरण करते हैं उनका वास्तव में कल्याण होता है। तू वह वाणी है, जो सूर्य और चन्द्रमा को प्राप्त हुई है। हे वाणी! तू वह वाणी है जिसने यह संसार रचाया है। तू बड़ी उदार व पवित्र है। संसार में जो तेरा अनुकरण करते हैं वे बड़े ऊंचे और पवित्र बन जाते हैं, वही उदार होते हैं।

आज का मनोहर पाठ हमारे हृदय को छूता चला जा रहा था। हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे हम परमपिता परमात्मा की इस पवित्र वाणी का प्रसारण करते ही चले जायें और वह जो आनन्दमयी माँ है उसकी ज्ञान रूपी लोरियों का हम पान करते ही रहें। यह जो ज्ञान विज्ञान रूपी वेद है यह मानव के अन्तःकरण को ऊर्ध्व बनाने वाला है। वह वेद वाणी हमारे जीवन को ऊर्ध्व और मानवता में परिणत करती चली जा रही है।

वेद हमे बारम्बार यह प्रेरणा दे रहा है, प्रेरित कर रहा है कि जहाँ जो शब्द उद्गीत रूप में गाया जाये, वहाँ उसको उसी रूप में गाना चाहिए। उस शब्द का, उसकी जो रचना है, उसको विकृत नहीं करना चाहिए। तो इसी प्रकार का हमारा वेद का मन्त्र हमें प्रेरित करता है।

इस संसार में आज हम उस वेद माता की याचना करते चले जाएं जो वेद माता हमें प्रकाश के देने वाली है। हमें प्रकाश के मार्ग पर पंहुचाने वाली है आज हम पुनः से उसकी याचना करते चले जाएं।

वेद रूपी प्रकाश है यह वेद रूपी माता है? कौन सी माता है वेद माता, जिस वेद माता के गर्भ में जाने के पश्चात हम महान बन जाते हैं। जिस गायत्री के गर्भ में

जाने के पश्चात् हम महान बन जाते हैं, विचित्र बन जाते हैं तो वह हमारे द्वारा कौन है वह हमारे द्वारा प्रकाश है हमें प्रकाश को पाने के लिये क्या करना पड़ेगा? वेद का जो विज्ञान है वह एक महान है, वह मानव को एक महानता का दर्शन कराता है। वेद का भाष्यकार भी वही होता है जो व्यवहार को जानता है, यौगिकवाद को जानता है और विज्ञान को जानता है वही वेद का भाष्य कर सकता है। अन्यथा वेद की जो चहुमुखी विद्या है इसका जो अध्ययन करने वाला हो, वही वेद की प्रतिभा को ऊँचा बनाता रहता है।

एक ही वेद मन्त्र में तीन प्रकार की धाराएं विद्यमान हैं, बिना तीन भाव के वेद मन्त्र को जान नहीं पाते, न उसमें से मानव दर्शन को जान सकते हैं, न विज्ञान को जान सकते हैं और ज्ञान से हम शून्य हो जाते हैं।

परन्तु जब प्रत्येक वेद मन्त्र में तीन प्रकार के भावों को दृष्टिपात करोगे, तीन प्रकार की धाराओं के ऊपर विचार विनिमय होगा, तो उसमें ज्ञान, विज्ञान और मानवीय दर्शन दृष्टिपात होगा। उसमें जब तीनों दृष्टिपात करने लगोगे तो वेद मन्त्र का आशय और ज्ञान की प्रतिभा हमारे समीप आ जाती है।

वैदिक जो भाषा है इसको देव भाषा कहा जाता है इसको देव वाणी कहा जाता है वेद को जानने वाला उसके प्रकारों को, स्वरों को जानने वाला ब्रह्माण्ड के लोकों की वार्ता को जान सकता है। यह जो देव भाषा है और देवभाषा का जो व्याकरण है वह ब्रह्मा का व्याकरण कहलाता है। ओर अनहद ध्वनि होती है मस्तिष्क में जो उसका तारतम्य साधना से बना लेता है वह ब्रह्माण्ड के किसी भी लोक की भाषा को जान लेता है।

वेद ही प्रकाश है, आनन्द है। जैसे सूर्य प्रातःकाल में प्रकाश लेकर आता है और वह संसार को प्रकाश देता चला जाता है, ऊर्ज्वा देता है, सत्ता प्रदान कर देता है, इसी प्रकार वेद के पठन पाठन करने वालों को जान लेना चाहिए कि वेद मानव का अनुपम प्रकाश है। वह वेद का जब गान गाता है तो उसके आन्तरिक जगत

में प्रकाश आना प्रारम्भ हो जाता है। वह प्रकाश ही मानव के अन्तःकरण को प्रकाशित कर देता है। सूर्य इस साधारण प्राणी को ऊर्ज्वा में प्रकाश देता है, वेद रूपी प्रकाश मानव के अन्तःकरण को पवित्र बना देता है।

संसार में आयु का जो वेद है उसको विचारना है। ''आयु को देने वाला हो वेद है।'' जो मानव प्रकाश में जाता है उस मानव को आयु दीर्घ हो जाती है आयुर्वेद किसे कहा जाता है जो आयु का देने वाला होता है। आयु क्या होती है? ''मानव का नियन्त्रण होता है जब वह अपनी सब इन्द्रियों पर संयम कर लेता है उसके विचारों में, आचार में संयम आ जाता है तो आयु को देने वाला बन जाता है।

ओ३म् स्तुता मयां वरदा वेंदमाता प्र चोंदयन्तां पावमानी द्विजानांम्। आयुंः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविंणं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्त्वा व्रंजत ब्रह्मलोकम् ॥ अथर्ववेद १९.७१.१

गायत्री त्र्यवसाना पञ्चपदा अतिजगती

पदार्थः सब साधकों द्वारा स्तुत हुई, अभीष्ट फल प्रदान करने वाली वेदमाता द्विजों को पवित्रता और प्रेरणा प्रदान करने वाली हैं। आप हमें दीर्घ जीवन प्राणशक्ति, सु सन्तति, श्रेष्ठ पशु, कीर्ति, धन वैभव और ब्रह्मतेज प्रदान करके ब्रह्मलोक के लिए प्रस्थान करें।

वेदमन्त्र गानम्

श्रृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज

पूज्य महानन्द जीः भगवन! मैं यह जानना चाहता हूँ जैसे हम वेदज्ञ ध्वनि का गान गाते हैं क्या उसका **मानवीय जीवन से क्या सम्बन्ध** हैं? ज्ञान से क्या सम्बन्ध है?

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे पुत्र अश्वं ब्रव्हे वर्णास्सुताम् यह वाक तो मैंने कई काल में प्रगट कराया था, परन्तु इसका उत्तर यह बन पाता है, कि वेदमन्त्र का जब हम उच्चारण करते हैं, तो जितना भी वेदमन्त्र हैं यह देव वाणी में कहलाता हैं, मानो इसको देव वाणी कहते हैं, देव वाणी का अभिप्राय यह है, कि क्या, इसे देवता उद्घोष रुप में उदघोषित करते रहे हैं। रहा यह, कि हमारा वेदमन्त्र से क्या, जीवन का सम्बन्ध हैं? बेटा! मैं तो यह कहा करता हूँ कि संसार में सम्बन्ध ही चेतना से है। मानो देखो, सम्बन्ध ही एक उग्र रुप को धारण कर लेता है। तो मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या हैं, आज मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, प्रत्येक वेदमन्त्र का मानव के जीवन से सम्बन्ध है, जिस मन्त्र के आधार पर, हम अपने जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों को उद्घोष करने लगते हैं। जैसे हमने वेदमन्त्र को उच्चारण किया, वाणी में पवित्रता आ जाती हैं। हृदयों में पवित्रता आ जाती है, आत्मा अपने लोक में प्रवेश कर जाता है। तो बेटा! परिणाम क्या है मानो हमारे जीवन का सम्बन्ध प्रत्येक मन्त्र से उसका समन्वय रहता हैं। मानव जो भी उच्चारण कर रहा हैं, गान गाया जा रहा हैं, परन्तु यह केवल आभा में कहलाने वाला एक विज्ञान है, जिस विज्ञान को ले करके हम अपनी मानवीय दशा को महान बनाते हैं। परन्तु प्रत्येक वेदमन्त्र हमारे जीवन का साथी बना हुआ है, उसमें विकृतियां नही होती, परन्तु अपनी आभा में गति करने वाला हैं, जिसको मन्त्र कहते हैं, मन्त्रार्थ कहते हैं। मन्त्र का सम्बन्ध हैं मन से, मन से जो भी मानव कर्म करता हैं, वह महान और पवित्र बन जाता हैं। तो उसी का नाम एक कर्म ध्वनि बन गई। तो हे

मेरे पुत्रां ब्रह्मा स्वस्तां ब्रहे मानो यह जो जितना भी क्रियाकलाप हो रहा है, यह सब प्रभु के आङ्गन में, प्रभु की महानता में, ओत प्रोत रहने वाला हैं। परन्तु विचार क्या कह रह है? क्या जब हम वेदमन्त्रों की ध्वनि से, गान गाते हैं तो प्रत्येक नस नाड़ियाँ मानो उद्घोष करने लगती हैं। जब प्रत्येक नस नाडियां मानो एक चित्रावली बन करके रह जाता है। सम्भवितां देवं गतं प्रमाणां ब्रह्मे लोकाः मेरे प्यारे! वह ब्रह्म औषध कहलाती है, जिसको धारण करने के पश्चात, मानव के जीवन में, एक मानवीयता के अङ्कुर उत्पन्न हो जाते हैं। क्योंकि परमपिता परमात्मा ने सीमा में बद्ध करते हुए, अभ्यस्त हो गया है। परन्तु जब यह प्रसंग आते हैं, कि हमारा जो जीवन हैं, उसका आयुर्वेद से सम्बन्ध होता है, आयु में हमें लगाता है, परन्तु ये वेदमन्त्र भी ये कहता है बलं ब्रहे वर्णभेतु मानो बलों को धारण करने वाला, वह मेरा चैतन्य देव कहलाता हैं। सम्भविता रुद्रो लोकाः यंचमा। मेरे प्यारे! प्रत्येक वेदमन्त्र को जो ध्वनि से गान रुप में गाते हैं, तो उदात्त, अनुदात्त में गाते रहते हैं। मेरे प्यारे! समय इतना नही है, कि जो मैं उन वाक्यों की पुनरूक्ति कर सकूं, विचार क्या है कि हम अपने में इतने महान मन्त्र को ले करके, क्योंकि मन से इसका समन्वय रहता हैं और मन को ही सीमा में लाना, मानो इसी का नाम मन्त्रणा कहलाया जाता है। तो प्रत्येक वेदमन्त्र मानव के जीवन को महान बना देता है आज कोई भी वेदमन्त्र ले करके जब मानव अपने को ऊँचे स्वरों में ध्वनि रुप में, धन मन्त्र कृणात्वा मानो धनवति बना देता है, वायु में गतियां हो रही है, धाराएं चल रही है, उन तरंगों को धारण करने वाला, महापुरूष कहलाता हैं। परन्तु आज मैं बेटा! दूरी न चला जाऊं, विचारों से, क्या मानव को अपनी आभा में अभ्यस्त रहना चाहिए उन्हीं विचारों से मानव का कल्याण होता है। मेरे प्यारे! देखो, वाहन गति कर रहा है, अन्तरिक्ष में जा रहा है, परन्तु वह मन्त्रणा प्रथम कहलाती हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! जैसे कोई मानव शत्रु हैं और शत्रु को हम विजय करना चाहते हैं, तो ऐसा कोई मन्त्र हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ ऐसा मन्त्र उसका चिन्तन हैं, परन्तु वह चिन्तन महान होना चाहिए, उस चिन्तन में एक विशेषताएं होती है, जिससे वह अपने में अपनेपन को जाना जाता हैं। तो वेदमन्त्र कहता है क्या, शत्रु को विजय करना है, तो अजामेध याग करो। हम अपने आन्तरिक शत्रु समाप्त करना चाहते हैं, तो बाह्य शत्रुओं का अभाव स्वतः हो जाता हैं। जैसे हम उच्चारण कर रहे हैं, ध्वनि रुप में अपने में वह पूर्णता को दृष्टिपात होता हैं। परन्तु वह अपनी आभा में शत्रुता को विजय करना चाहता हैं, विजय हो सकता है परोक्ष, अपरोक्ष रुप में, सत्य के द्वारा सर्वत्र कार्य हो रहा है।

तो मेरे प्यारे! यह कैसा अनुपम ज्ञान हैं, जिसके ऊपर हम परम्परागतों से अनुसन्धान करते आए हैं, अजामेध याग का वर्णन जहाँ आता है वहाँ वह अन्वकृत कहलाता है। जिससे मुनिवरों! देखो, आन्तरिक शत्रु समाप्त हो जाएं, जब आन्तरिक शत्रु समाप्त होंगें तो बाह्य शत्रु भी समाप्त हो जाएंगें। तो प्रथम अपने आन्तरिक शत्रुओं को समाप्त करना है। मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें दूरी न ले जाऊं, सम्भवा गच्छं देवं ब्रहे ब्रह्मा वर्णासुते मेरे प्यारे! जब हम एक वाक को उच्चारण करते हैं, तो नाना रश्मियों का जन्म हो जाता है।